मुस्कुराकर जवाब दिया कि 'मेरे पास टीवी है, दो लैपटॉप और दो टच स्क्रीन मोबाइल हैं। लेकिन तब भी मैं टीवी नहीं देखता, न ही व्हाट्सएप और फेसबुक पर समय बिताता हूँ ; मुझे रेडियो पर विविध भारती सुनना पसंद है।' मेरी इस बात पर कई बार सामने वाला अपने दांतों तले उंगुली दबा लेता है। लेकिन सच यही है कि मेरे दो तीन शौक हैं, लेकिन इनमें भी सबसे ज़्यादा पसंद रेडियो पर विविध भारती सुनना है।

विविध भारती पर कई बार ये पंक्तियाँ प्रसारित होती हैं-'विविध भारती.....देश की सुरीली धड़कन....।' मैं अपने शब्दों में इन पंक्तियों को दोहराकर कहना चाहता हूँ- 'विविध भारतीः मेरी सुरीली धड़कन।' विविध भारती सुनना मेरा शौक ही नहीं ; बल्कि इससे दो क़दम आगे बढ़कर कहूँ तो मैं विविध भारती का गहरा आशिक हूँ ;और यह आशिकी दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। बहुत बड़े परिवार से भी नहीं हूँ, यहाँ तो पानी पीने के लिए हर दिन कुआँ खोदना पड़ता है; विविध भारती के सारे कार्यक्रम अपने समय पर आते हैं; और मुझे उस समय अपने ऑफिस जाना पड़ता है; इसलिए ज़ाहिर सी बात है कि इसके कार्यक्रम सुनने के लिए मुझे युक्ति निकालनी पड़ती है, कुछ अन्य सुखों का त्याग करना पड़ता है।

दोस्तो, उपर्युक्त बातों को पढ़कर हो सकता है कि आपके मन में कुछ सवाल आ रहे हों कि - कैसी युक्ति? किस तरह के सुखों का त्याग करना पड़ता है? क्या विविध भारती सुनने के लिए भी कुछ त्याग करने की ज़रूरत है? मैं आपके सारे सवालों का जवाब दूँगा, बस समझ नहीं आ रहा कि कहाँ से शुरू करूँ ? .....चलिए मैं बिना किसी भूमिका के शुरू से आपको बताता हूँ। सबसे पहले रेडियो से अपने परिचय से शुरुआत करता हूँ। रेडियो से मेरा परिचय मेरी माँ ने करवाया। मेरे घर में एक रेडियो था, मैं अपनी माँ को अक्सर रेडियो सुनते देखता। यह कब की बात है, मुझे ठीक से याद नहीं, लेकिन कुछ अनुमान के सहारे कहने का प्रयास करता हूँ। मेरा जन्म 1977 में हुआ है, मुझे लगता है कि मैं उस समय सात-आठ वर्ष का रहा होऊँगा; यानी एक अनुमान से कहूँ तो यह 1983-84 की बात होगी। माँ रेडियो सुनती रहती। मैं जब पूछता कि माँ तुम क्या सुन रही हो ? तो माँ कहती- 'रेडियो सीलोन'। माँ 'रेडियो सीलोन' के साथ और भी रेडियो चैनल सुनती थी; लेकिन मुझे उनके नाम अब याद नहीं। उन दिनों हमारे यहाँ टीवी नहीं आया था, रेडियो मनोरंजन का केंद्र हुआ करते थे। मैंने उन दिनों के बारे में यह भी सुना था कि लड़की के विवाह में साइकिल के साथ रेडियो दहेज के रूप में दिया जाता था।

मुझे यहाँ पर रेडियो से संबंधित अपने बचपन की एक घटना याद आ रही है। हमारे घर से लगभग आधा किलोमीटर की दूरी पर योगेन्द्र मास्टर साहब का घर था। मैं अपने छोटे भाई प्रदीप के साथ उनके यहाँ ट्यूशन पढ़ने जाया करता था। मेरे पड़ोस में ही संगीता और नवीन रहते थे, वे दोनों भी आपस में भाई बहन थे। संगीता उम्र में हम सब से बड़ी थी। उसके बाद मेरा नंबर था। मेरे बाद नवीन और सबसे छोटा प्रदीप था। हम चारों योगेन्द्र मास्टर साहब से पढ़ने जाते। एक बार हम सब जब योगेन्द्र मास्टर साहब के यहाँ पहुँचे तो उनके घर में एक बड़ा रेडियो देखकर दंग रह गए; हम इसलिए दंग रह गए क्योंकि रेडियो अपने आकार में बहुत बड़ा था। यह आज के समय की माइक्रोवेव ओवन से भी बड़ी थी। हमने इतना बड़ा रेडियो पहले कभी नहीं देखा था। हम हैरान रह गए। फिर योगेन्द्र सर ने हमें पढ़ाना शुरू किया, लेकिन हमारा ध्यान रेडियो पर ही अटका रहा। हमने उनसे अनुरोध किया कि वे रेडियो बजाकर हमें सुनाएँ। हमारा अनुमान था कि जब रेडियो इतना बड़ा है तो उसमें गीत भी ऊँची आवाज़ में बजते होंगे, लेकिन हुआ उल्टा। योगेन्द्र सर ने रेडियो की नॉब घुमाना शुरू किया; उन दिनों रेडियो में सुइयाँ हुआ करती थीं। सुइयों को बार-बार इधर-उधर घुमाना पड़ता था और तब खड़खड़ाहट के साथ आवाज़ सुनाई पड़ती थी। योगेन्द्र सर रेडियो की सुइयाँ घुमाते रहे और रेडियो सांय सांय करती रही। हम गीत नहीं सुन पाए, किंतु इतना बड़ा रेडियो देखने, उसकी सुइयों को घूमते देखने और उसे छूने का रोमांच भी कम नहीं था।

रेडियो के बाद ट्रांजिस्टर का समय आया और रेडियो छोटे आकार में आने लगे। उन दिनों कई लोग इधर-उधर टहलते समय रेडियो अपने साथ रखते थे। मैं जिन लोगों को रेडियो लेकर टहलते देखता, उनके प्रति कुछ ज़्यादा सम्मान का भाव मन में आ जाता। फिर मेरे घर में टेलीविज़न आया। अब हमारे यहाँ टीवी चलता और समय-समय पर रेडियो बजता; किंतु धीरे-धीरे रेडियो सुनना कम होने लगा। इसका एक कारण तो यह था कि तकनीकी कारणों से रेडियो सुनते समय बीच-बीच में व्यवधान आ जाता, हमें खऽर्र खऽर्र की ध्वनि सुनाई पड़ती, जो सारा मज़ा किरकिरा कर देती; हमें कई बार रेडियो के मीटर की सुइयाँ इधर-उधर खिसकानी पड़तीं। दूसरा कारण यह था कि अब रेडियो का स्थान टीवी लेने लगा था; रेडियो में सिर्फ सुनने का सुख था, जबकि टीवी में सुनने के अलावा देख भी सकते थे। तीसरा कारण यह था कि हमारा रेडियो अब बूढ़ा होने लगा था; पहले रेडियो रिपेयर के लिए कई दुकानें थीं, किंतु टीवी के आने के बाद ये दुकानें धीरे-धीरे बंद होने लगी थीं; अब रेडियो बनाने वाले मुश्किल से मिलते, उन्होंने अपनी दुकानें बंद कर दीं या फिर अपना धंधा बदल डाला। इस तरह कुछ समय के बाद हम लोगों ने धीरे-धीरे रेडियो सुनना छोड़ दिया। लेकिन यह रेडियो से संबंधों में एक छोटा सा ब्रेक भर था, क्योंकि आने वाले समय में इससे फिर एक नया संबंध जुड़ा, और इस संबंध को जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका मेरे बड़े भैया ने निभाई।

मेरे बड़े भैया राज कुमार बर्णवाल बीआईटी, सिंदरी (तत्कालीन बिहार, वर्तमान समय में झारखंड में स्थित) में इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहे थे। बड़े भैया को गीत सुनने का शौक था, पिताजी ने उनके लिए एक नया रेडियो खरीद दिया था। बड़े भैया इंजीनियरिंग पास करके घर आए। यह शायद 1993-94 की बात होगी। घर आने के बाद भी वे नियमित रूप से रेडियो सुना करते। हमारा पुराना रेडियो